प्रचलित है, अर्थात् वहांके जीव मनुष्यादि, अपनी सम्पूर्ण आयु विषय भोगों ही में विताया करते हैं। ये भोग भूमियां उत्तम मध्यम और जघन्य ३ प्रकारकी होती है और उनकी क्रमसे तीन, दो और एक पल्यकी बड़ी बड़ी आयु होती है। आहार बहुत कम होता है। वे सब समान (राजा प्रजाके भेद रहित) होते हैं। उनको सब प्रकारकी भोग सामग्री कल्पवृक्षो द्वारा प्राप्त होती है, इसलिये वे व्यापार धंधा आदिकी झंझटसे बचे रहते है। इस प्रकार वे (वहांके जीव) आयु पूर्ण कर मंद कपायोंके कारण देव गतिको प्राप्त होते है। भरत और ऐरावत क्षेत्रोंके आर्य खंडोंमें उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी (कल्प काल) के छः काल (सुखमा सुखमा, सुखमा, सुखमा दुखमा, दुखमा सुखमा, दुखमा, और दुखमा दुखमा) की प्रवर्ति होती है सो इनमें भी प्रथमके तीन कालोंमें तो भोग भूमिकी ही रीति प्रचलित रहती है, शेष तीन काल कर्मभूमिके होते है, इसलिये इन शेष कालोंमें चौथा (दुखमा सुखमा) काल है, जिसमें त्रेशठ शलाका आदि महा पुरुष उत्पन्न होते हैं। पांचवें और छठवें कालों क्रमसे आयु, काय, बल, वीर्य घट जाता है और इसलिये इन कालोसे कोई भी जीव मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता है। विदेह क्षेत्रोंमें ऐसी कालचक्रकी फिरन नहीं होती है। वहां तो सदैव चौथा काल रहता है और कमसे कम २० तथा अधिकसे अधिक १६० श्री तीर्थंकर भगवान तथा अनेकों सामान्यकेवली और मुनि श्रावक आदि विद्यमान रहते हैं और इसलिये सदैव ही मोक्ष-मार्गका उपदेश व साधन रहनेसे जीव मोक्ष प्राप्त करते रहते हैं। जिन क्षेत्रोंमें रहकर जीव आत्म-धर्मको प्राप्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकते है, अथवा जिनमें मनुष्य असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प व विद्यादि द्वारा आजीविका करके जीवन निर्वाह करते हैं, वे कर्मभूमि कहलाते हैं।

इस मनुष्य क्षेत्रके मध्य जो जम्बूद्वीप है उसके बीचोंबीच सुदर्शन मेरु नामका स्तंभाकार एकलाख योजन ऊंचा पर्वत है। इस पर्वतपर सोलह अकृत्रिम जिन मंदिर हैं। यह वही पर्वत है, कि जिस पर भगवान्‌का जन्माभिषेक इन्द्रादि देवो द्वारा किया जाता है। इसके सिवाय ६ पर्वत और भी दण्डाकार (भीतके समान) इस द्वीपमें है, जिनके कारण यह द्वीप सात क्षेत्रोंमें बंट गया है। ये पर्वत सुदर्शन मेरुके उत्तर और दक्षिण दिशामें आडे पूर्वसे पश्चिम तक समुद्रसे मिले हुए हैं। इन सात क्षेत्रोंमेंसे दक्षिणकी ओरसे सबके अंतके क्षेत्रको भरतक्षेत्र कहते है। इस भरतक्षेत्रमें भी बीचमें विजयार्द्ध पर्वत पड़ जानेसे यह दो भागोमें बंट जाता है। और उत्तरकी ओर जो हिमवन पर्वतपर पद्मह्रद है, उससे गंगा और सिंधु दो महा नदियां

निकलकर विजयार्द्ध पर्वतको भेदतीं हुई पूर्व और पश्चिमसे बहती हुई दक्षिण समुद्रमें मिलती हैं। इससे भरतक्षेत्रके छः खंड हो जाते हैं; इन छः खंडोंमेंसे सबसे दक्षिणका बीच वाला खंड आर्य खंड कहाता है और शेष ५ म्लेच्छ खंड कहाते हैं। इसी आर्य खंडमें तीर्थंकरादि महापुरुष उत्पन्न होते हैं। यही आर्य खंड कहाता है।

इसी आर्य खंडमें मगध नामका एक प्रदेश है, जिसे आजकल बिहारप्रांत कहते हैं।

इस मगधदेशमें राजगृही नामकी एक बहुत मनोहर नगरी है। और इस नगरीके समीप विपुलाचल, उदयाचल आदि पंच पहाड़ियां हैं तथा पहाड़ियोंके नीचे कितनेक उष्ण जलके कुंड बने हैं। इन पहाड़ियो व झरनोंके कारण नगरकी शोभा विशेष बढ़ गई है। यद्यपि काल दोषसे अब यह नगर उजाड़ हो रहा है परंतु उसके आसपासके चिह्न देखनेसे प्रकट होता है कि किसी समय यह नगर अवश्य ही बहुत उन्नत होगा।

आजसे २५२४ वर्ष पहिले अंतिम (चौवीसवें) तीर्थंकर श्री वर्द्धमान स्वामीके समयमें इस नगरमें महामंडलेश्वर महाराजा श्रेणिक राज्य करता था। यह राजा बड़ा प्रतापी न्यायी और प्रजापालक था। यह अपनी कुमार अवस्थामें पूर्वोपार्जित कर्मके उदयसे अपने पिता द्वारा देशसे निकाला गया था और भ्रमण करते हुए एक बौद्ध साधुके उपदेशसे बौद्धमतको स्वीकार कर चुका था। वह बहुत काल तक बौद्ध मतावलंबी ही रहा। जब यह श्रेणिककुमार निज बाहु तथा बुद्धिबलसे विदेशोंमें भ्रमण करके बहुत विभूति व ऐश्वर्य सहित स्वदेशको लौटा, तो वहांके निवासियोंने इन्हें अपना राजा बनाना स्वीकार किया। इस समय इनके पिता उपश्रेणिक राजाका स्वर्गवास हो चुका था, और इनके एक भाई चिलातक नामके अपने पिता द्वारा प्रदत्त राज्य करते थे। इनके राज्य कार्यमें अनभिज्ञ होने तथा प्रजापर अत्याचार करनेके कारण प्रजा इनसे अप्रसन्न हो गई थी, इसीसे सब प्रजाने मिलकर इन्हें राज्य च्युत कर दिया था। ठीक है, राजा प्रजापर अत्याचार नहीं कर सकता है, वह एक प्रकारसे प्रजाका रक्षक (नौकर) ही होता है, क्योंकि प्रजाके द्वारा ही राजाको द्रव्य मिलता है, अर्थात् उसकी जीविका प्रजाके आश्रित है, इसलिये वह प्रजापर नीतिपूर्वक शासन कर सकता है न कि स्वेच्छाचारी होकर अन्याय कर सक्ता है। उसका कर्त्तव्य है कि वह प्रजाकी भलाईके लिये सतत प्रयत्न करे तथा उसकी यथासाध्य रक्षा व उन्नतिका उपाय करता रहे, तभी वह राजा कहलानेके योग्य हो सकता है और प्रजा भी तभी उसकी

और भावना भावे । इस प्रकार राजा गुणभद्र और गुणवती रानीने व्रतकी विधि सुनकर भाव सहित धारण किया और भावना भाई । सो अंत समय समाधिमरण कर अच्युतस्वर्गमें इन्द्र इन्द्राणी हुए, वहांसे वह रानीका जीव (इन्द्रानी) चय कर यह तेरे श्रुतशालनी नामकी कन्या हुई है । इस प्रकार गुरुमुखसे भवान्तर सुनकर उस कन्याने पुनः श्रुतस्कंध व्रत धारण किया और चारित्रके प्रभावसे विषय कषायोंको अतिशय मंद किये, पश्चात् अंत समयमें समाधिसे मरण कर, स्त्री लिंगको छेदकर अहमिन्द्र पद प्राप्त किया और वहांके अनुपम सुख भोगकर अपर विदेह कुमुदवती देशके अशोकपुरमें पद्मनाभ राजाकी पट्टरानी जितपद्माके गर्भसे नयंधर नाम तीर्थंकर हुआ । साथ ही चक्रवर्ति और कामदेव पदको भी सुशोभित किया । बहुत समय तक नीतिपूर्वक प्रजाका पालन किया । पश्चात् एक दिन इन्द्र धनुषको आकाशमें विलीन होते देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ, सो अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्व, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्म, इन वैराग्यको दृढ़ करनेवाली बारह भावनाओंका चितवन कर दीक्षा ग्रहण की, और कितनेक काल तक उत्कृष्ट संयम पालकर शुक्ल ध्यानके योगसे केवलज्ञान प्राप्त किया तब देवोंने समवशरणकी रचना की । इस प्रकार अनेक देशोंमें विहार करके भव्य जीवोंको वस्तु स्वरूपका उपदेश किया और आयुके अंत समयमें अघाति कर्मोंको नाश करके अविनाशी सिद्धपद प्राप्त किया । इस प्रकार और भी जो नरनारी भाव सहित इस व्रतको पालन करेंगे तो अवश्य ही उत्तम पदको प्राप्त होवेंगे ।

श्रुतशालिनि कन्या, कियो श्रुतस्कध व्रत सार । दीप कर्म सब नाशके, लहो मोक्ष सुखकार ॥



त्रिलोक तीज कथा ।

वदो श्री जिनदेव पद, वन्दू गुरु चरणार । वन्दू माता सरस्वती, कथा कहू हितकार ॥

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्र सम्बन्धी कुरुजांगलदेशमें हस्तनागपुर नामका एक अति रमणीक नगर है । वहांका राजा कामंदुक और रानी कमललोचना थी और उनके विशाखदत्त नाम पुत्र था । उस राजाके वरदत्त नामका एक मंत्री था ।